ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-9* December-2020
Anthology : The Research

शिक्षा में उपभोक्तावादी प्रवृति के प्रचलन से प्रभावित जीवन मूल्य

Life Value Affected By The Trend of Consumerist Trend In Education

Paper Submission: 15/12/2020, Date of Acceptance: 26/12/2020, Date of Publication: 27/12/2020

मंजू गुप्ता
सह आचार्य,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय कला महाविद्यालय,
कोटा, राजस्थान, भारत

सारांश

आज जब नई शिक्षा नीति तैयार की जा रही है तो मूल्यों की शिक्षा की आवश्यकता को नकारा नहीं जाना चाहिए। भारत में मूल्यों की शिक्षा के विमर्श की वैदिक काल से ही समृद्ध परम्परा रही है। कमी है तो विमर्श को स्कूली शिक्षा में ठीक से लागू करना। चह्वाण समिति ने सत्य, धर्म (सही आचरण), शान्ति, प्रेम, अहिंसा को मूल्य शिक्षा में वैश्विक आधार बिंदु माना है। सभी पन्थों में इनकी स्वीकार्यता रही है। मूल्यों की शिक्षा एक विषय के रूप में नहीं देकर सम्पूर्ण माध्यमिक शिक्षा का ध्येय ही संस्कारों का निर्माण हो। अच्छे शिक्षक ही अपने व्यवहार से बच्चों में अच्छे संस्कार पैदा कर सकते हैं। संस्कार उत्पन्न करने में भाषा का बहुत महत्त्व होता है। वर्तमान भारत में अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों का अनावश्यक प्रसार चिन्ता का विषय है। शिक्षा सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज की आधारशिला है, शिक्षा के अभाव में इसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति में बौद्धिक जागृति होती है और इसके द्वारा वह नवीन सांस्कृतिक मूल्यों की रचना करता है। शिक्षा के द्वारा ही संस्कृति विकासोन्मुख होती है। शिक्षा जीवन की राह प्रशस्त करती है, जीवन का मार्ग दिखाती है और जीवन को सुखद बनाती है। शिक्षा के द्वारा मानव बुराई से अच्छाई की ओर, हीनता से उच्चता की ओर, असंभव से संभव की ओर, हिंसा से अहिंसा की ओर, पशुता से मनुष्यता की ओर ले जाने का मार्ग प्रशस्त करती है। यही जीवन मूल्य है, यही संस्कृति है, जिसका निर्माण शिक्षा से होता है। ''कोई भी देश अपनी भाषा – संस्कृति की उपेक्षा करके उन्नति नहीं कर सकता''

Today when the new education policy is being formulated, the need for education of values should not be denied. There has been a rich tradition of education of values in India since the Vedic period. If there is a shortage, then the discussion should be implemented properly in school education. The Chavan Committee considers truth, religion (right conduct), peace, love, non-violence to be the global foothold in value education. They have been accepted in all the pages. By giving education of values not as a subject, the aim of complete secondary education should be to create rites. Only good teachers can inculcate good values in children by their behavior. Language is very important in creating rites. Unnecessary proliferation of English medium schools in present India is a matter of concern. Education is the cornerstone of a civilized and cultured society, it cannot be imagined in the absence of education. Through education there is intellectual awakening in the person and through this he creates new cultural values. Culture is development oriented only through education. Education paves the way to life, shows the way of life and makes life enjoyable. Through education, humans lead the way from evil to good, from inferiority to highness, from impossible to possible, from violence to non-violence, from animalism to mankind. This is the value of life, this is the culture, which is formed by education. "No country can progress by neglecting its language and culture."

मुख्य शब्द : उपभोक्तावादी, जीवन मूल्य, संस्कार, संस्कृति, व्यवसायीकरण, डिजिटलीकरण, स्वावलम्बी।
Consumerist, values of life, values, culture, commercialization, digitization, self-reliance

प्रस्तावना

अमुक देश उन्नत है या अवनत, इसकी पहचान वहाँ रहने वाले नागरिकों से की जाती है । राष्ट्र के नागरिकों ने किन मानवीय मूल्यों को आत्मलय किया है, यही उनके राष्ट्रीय विकास की कसौटी है । भौतिक सुख–सुविधाओं का अम्बार, चल–अचल सम्पत्ति की चकाचौंध तथा ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में अद्‌भुत उड़ाने उस राष्ट्र को वह गौरव प्रदान नहीं कर सकती हैं जो उसे निर्धन रहते हुए अपनी सद्वृत्तियों एवं शाश्वत मानवीय मूल्यों को अपनाने से प्राप्त होता है । अतः जिस देश में मानवीय मूल्यों की रिक्तता है, पारम्परिक प्रेम की शून्यता तथा पाश्विक जीवन की बहुलता है वह वस्तुतः जीवंतता से रहित है तथा उसका भविष्य अनिश्चितता के गहन गहवर में जा पड़ता है ।

भारत का अतीत अतीव गौरवशाली रहा है इस आधार पर हम वर्तमान को सर्वोच्च एवं मानवीय मूल्यों का एक मात्र संरक्षक मान लें, यह भ्रमात्मक स्थिति है। आज हमारा राष्ट्र अन्य देशों की तरह उपभोक्ता संस्कृति की चपेट में है हमने अपने स्वर्णिम अतीत को विस्मृत कर देने में ही महारत हासिल कर ली है क्योंकि हम रूढ़िवादी तथा पुरातनपंथी कहलाने से सर्वथा बचे रहना चाहते हैं चाहे इसके लिये हमें अपने कितने ही शाश्वत जीवन–मूल्यों की बलि देनी पड़े । हमें आज पश्चिमी सभ्यता को अपनाने का शौक इस कदर चर्रा गया है कि हम उसी भौतिकवादी सुखभोग की सभ्यता का अंधानुकरण करने में प्राण–पण से लगे हैं । पश्चिम ने हमारे सुनहरे अतीत को धूमिल बनाने का जो दुष्चक्र चलाया है, वर्तमान उसका प्रवल साक्षी है ।

सम्प्रति पश्चिम की उपभोक्ता संस्कृति ने भारत की भाषा, भोजन, भावना तथा वेश–भूषा पर एक साथ चतुर्मुखी आक्रमण कर दिया है । विडंबना यह है कि जहाँ पश्चिमी राष्ट्र भारत की उन्नत आध्यात्मिकता को अपनाने की ओर अभिमुख हुए हैं वहाँ वे हमें हमारे मानवीय मूल्यों की शाश्वत विरासत से भटकाने के प्रति पर्याप्त रुचिवान हैं । यही कारण है कि हमारे आध्यात्मिक योग के दर्शन पश्चिमी देशों में जिस स्पष्टता एवं भव्यता से हो रहे हैं, वैसे भारत में नहीं। यदि भूले–भटके योग की एकाध किरण यहाँ दिखलाई भी पड़ती है तो वह पश्चिमी जगत में घूमकर वापस आती है। इस प्रकार अपनी मूल वस्तु पश्चिम में पहुंचकर पुनः पश्चिमी रंग में रंगी हुई वापस आ रही है। अतः मूल विलुप्त है क्योंकि उस पर पश्चिम का मुलम्मा चढ़ गया है।

जीवन के अस्तित्व को प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करता है लेकिन चिन्ता और भय मस्तिष्क पर अनावश्यक बोझ डालकर इसे सतत् क्षीण करते रहते हैं । इसका मूल कारण जीवन मूल्यों की सही समझ न होने के फलस्वरूप जीवन का सही लक्ष्य निर्धारित नहीं होना है । जीवन तीन प्रकार से जीया जाता है – विकृति का जीवन, प्रकृति का जीवन तथा संस्कृति का जीवन । इसी को हमारे धर्मग्रन्थों में रोगी का जीवन, भोगी का जीवन तथा योगी का जीवन कहा है। गीता में इसी को तम, रज और सत् कहा गया है।

भारतीय संस्कृति में शाश्वत जीवन मूल्यों की स्थापना में सात श्रेष्ठतायें अपनाने को कहा गया है जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है –

1. स्वस्थ एवं प्रसन्न रहना।
2. शारीरिक मानसिक सदा सकारात्मक सोच रखना ।
3. भावनात्मक – सहनशीलता, स्नेह, सद्व्यवहार सहजता का भाव रखना।
4. पारिवारिक प्यार को व्यापार नहीं समझना अपितु सच्चा प्रेम।
5. आध्यात्मिक – सबके कल्याण की प्रभु से प्रार्थना करना।
6. सामाजिक – सहयोग, सेवा, समर्पण का भाव रखना।
7. आर्थिक ईमानदारी से धनोपार्जन करना।

ये वे शाश्वत मूल्य हैं जो शताब्दियों की अग्नि परीक्षा में खरे उतरे हैं । ये मूल्य ही मानवता की मणियाँ हैं, आत्मा के वैभव हैं तथा दिव्यता के प्रकाश स्तम्भ हैं यदि इन मूल्यों की स्थापना हमने कर ली तो उसकी धारा कहीं से भी निकले वह कल्याण ही करेगी इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जीवन मूल्य सार्थक जीवन जीने के वे मूल्य हैं जो व्यक्ति के स्वयं के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक स्वास्थ्य को निर्मल रखते हैं तथा समाज द्वारा स्थापित स्वस्थ मान्यताओं, परम्पराओं, रीतिरिवाजों, मानदण्डों एवं विश्वासों को दृढ़तापूर्वक स्थापित करते हैं ताकि व्यक्ति अपना चहुँमुखी विकास कर समाज को निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर करने मे सहभागी बन सके ।

प्राचीन काल में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्ति जीवन मूल्य रहे तो वैदिक काल में सत्यंवद् धर्मचर, मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, एवं अतिथि देवो भव् आदि जीवन मूल्य रहे। इसी प्रकार व्यक्तिगत जीवन मूल्यों में सहनशीलता, ईमानदारी, सहयोग, अहिंसा, सेवा भाव, अनुशासन, धैर्य, सदाचरण, कुशलता, साहस, आज्ञापालन का नाम लिया जाता है इसी संदर्भ में राष्ट्रीय जीवन मूल्यों में समानता, स्वतंत्रता, सहिष्णुता, धर्म निरपेक्षता एवं राष्ट्रवाद आदि मूल्यों की श्रेणी में आते हैं ।

आज उपभोक्तावाद ने जीवन मूल्यों की समस्त मान्यताओं को उलट दिया है । भौतिकवाद की चकाचौंध से आज मानव दिग्भ्रमित है। चारों और ईर्ष्या, द्वेष, लोभ, मोह, क्रोध, अहंकार एवं निराश व्याप्त है। दूसरे की टाँग खींचकर आगे बढ़ने की लालसा बढ़ रही है इच्छाओं में दृद्धि के कारण बेईमानी और भ्रष्टाचार बढ़ रहा है । आज दुनिया के भ्रष्टतम देशों में भारत का भी नाम लिया जात है। अर्थ' जो भारतीय संस्कृति में कभी परिवार का हेतु समझा जाता था वह 'पूँजी' बन गया तथा पश्चिमी देशों के प्रभाव के कारण वाणिज्य' का श्रोत बन गया है उपभोक्तावादी प्रदृत्ति न राजनीति, शासन, शिक्षा, स्वास्थ्य उद्योग एवं समाज के प्रत्येक अंग को बुरी तरह प्रभावित किया है. तथा जीवन मूल्यों की परिभाषा ही उल्टी हो गई है।

'खाओ–पीओ और मौज करो' की संस्कृति ने आज इन्सान को ऐसा बना दिया है कि वह धनवान होते हुये भी मूल्यवान नहीं है नशा करना, धूम्रपान, मांसाहारी

भोजन, देर तक जागना और सोना, वाहन तेज चलाना, तनिक सी किसी बात पर क्रोधित होकर असंयामित हो जाना इन्सान की आदत में आ गया है । परमात्मा का स्मरण, इन्सान से प्यार, निर्धन और असहायों के प्रति उदारता. सहयोग, सेवा और समन्वय उसकी जिन्दगी से दूर हो गये हैं । जिसके कारण स्वच्छ हवा के बाद भी आत्मा में प्रदूषण, स्वादिष्ट भोजन के बाद भी अजीर्ण विशाल भवन होते हुये भी टूटते परिवार दुनियां से दूरी कम लेकिन बिखरते रिश्ते, धन–बल की शक्ति फिर भी सुरक्षा की चिन्ता दिन–रा भाग–दौड़ फिर भी दुःखी मन, कहने को बड़े आदमी लेकिन अन्दर से खोखला चरित्र, ढलती उ फिर भी प्रतिष्ठा की लिप्सा तथा स्वयं सुखी फिर भी दूसरों के सुःख से दुःखी जैसी स्थिति चारों ओर दिखाई दे रही है । यह जीवन मूल्यों का ह्रास नहीं तो और क्या है आज इन्सान चन्द्रमा पर तो पड़ गया है लेकिन उसकी इन्सान से दूरी बढ़ गई है वास्तविकता यह है कि हमारी जिन्दगी में बरस रहे हैं । बरसों में जिन्दगी नहीं जुड़ रही है। आज व्यक्ति हो चाहे समुदाय, समाज हो या देश, इस उपभोक्तावादी प्रवृत्ति ने हर क्षेत्र इतना प्रभावित किया है कि प्रत्येक व्यक्ति तथा देश येन–केन–प्रकरेण दूसरे को दबाकर आगे के प्रयास में हैं ।

शिक्षा मानव के सशक्तीकरण का एक ऐसा माध्यम है जिससे वह एक अच्छा एवं उच्चतर जीवन जीने योग्य बनता है। अच्छे जीवन से तात्पर्य रोजगारपरक अथवा स्वावलम्बी जीवन से है जिसमें अपने जीवनयापन के लिये किसी अन्य पर निर्भर न रहना पड़े । उच्चतर जीवन का अर्थ संस्कारयुक्त उस जीवन से है जिससे वह अपने अन्दर दूसरे को भी अच्छी प्रकार जीवन जीने देने में सहयोग करता है । शिक्षा के माध्यम से ही उसमें भारतीय संस्कृति के उन मूल्यों का निर्माण होता है जिन्हें जीवन मूल्य अथवा मानवीय मूल्य (भ्नउंद .टंसनमे) कहते हैं ।
प्राचीन समय में गुरूकुलों और विद्यालयों में बच्चों को ऐसी शिक्षा प्रदान की जाती थी जो बच्चे को आगे चलकर स्वावलम्बी तो बनाती ही थी साथ में ऐसे संस्कार भी प्रदान करती थी जिनसे वह समाज के लिये एक उपयोगी नागरिक भी बनता था। प्रारम्भ से ही बच्चों को अनुशासन, आज्ञापालन, सद्व्यवहार, ईमानदारी, सहयोग, सेवा एवं समर्पण आदि के गुण सिखाये जाते थे ताकि भविष्य में वह अपने व्यक्तित्व के विकास के साथ साथ समाज को भी कुछ देने लायक बन सके । उसको परिवार और समाज के लिये स्वयं तथा देश के लिये स्वयं, परिवार एवं समाज के हितों का त्याग करना सिखाया जाता था ।

आज शिक्षा के क्षेत्र में भी उपभोक्तावादी प्रवृत्ति का ही बोलबाला है। शिक्षा का व्यवसायीकरण, स्थान–स्थान पर खुल रहे पब्लिक स्कूल, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षण संस्थानों को जीवन मूल्यों की शिक्षा से कोई सरोकार नहीं है । समाचार–पत्र, दूरदर्शन एवं मीडिया के अन्य साधनों से इस प्रकार का प्रचार किया जाता है कि उन संस्थानों से निकलने वाले विद्यार्थी विशिष्ट श्रेणी के होंगे । आकर्षक विज्ञापनों द्वारा बच्चे एवं उनके अभिभावको को आकर्षिक किया जाता है। आज अभिभावकों की भी यह मान्यता होती जा रही है कि विशाल भवन, जेब साली करने वाली फीस एवं पश्चिमी सभ्यता का रहन सहन सिखाने वाले संस्थान ही उत्तम विद्यार्थी बना सकते हैं । इनकी दृष्टि में आदर्श विद्यार्थी का अर्थ आदर्श मानव नहीं अपितु पश्चिमी सभ्यता के रंग–ढंग में ढला हुआ व्यक्ति हो गया है ।

स्वतंत्रता के अठ्ठावन वर्ष व्यतीत होने के बाद भी ऐसी कोई समान शिक्षा पद्धति या कॉमन स्कूल सिस्टम लागू नहीं किया जा सका है जो अमीर–गरीब सबको समान रूप से अच्छी एवं संस्कार युक्त शिक्षा प्रदान कर सके । विशिष्ट श्रेणी के तथा कथित लोग जिनमें प्रभावी राजनीतिज्ञ, नौकरशाह, उद्योगपति एवं अन्य ऐसे व्यक्ति सम्मिलित हैं जो ऐसे प्रयासों को सफल होने ही नहीं देते। देश में आज जितने भी विशिष्ट श्रेणी के शिक्षण एवं प्रशिक्षण संस्थान हैं वे सब विशिष्ट श्रेणी के लोगों के हैं तथा उनमें विशिष्ट परिवारों के बच्चे ही शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं । इस उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के कारण ही बड़े बड़े घराने इस प्रकार के संस्थान चला रहे हैं तथा आज यह एक अत्यन्त आकर्षक उद्योग बनकर धनोपार्जन का साधन बन गया है।

शिक्षा में इस उपभोक्तावादी प्रवृत्ति ने निम्न प्रकार जीवन मूल्यों को प्रभावित किया है .

1. गरीब–अमीर के बीच की दूरी बढ़ी है तथा शिक्षा पर ऐसे लोगों का नियंत्रण बढ़ा है जिनका उद्देश्य केवल धन कमाना है उनको जीवन मूल्यों से कोई सरोकार नहीं है ।
2. पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पुस्तकों में जीवन–मूल्यों को जो सर्वोच्च स्थान मिलना चाहिये था वह नहीं मिला तथा शिक्षकों को भी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इसकी व्यावहारिक शिक्षा नहीं दी जाती जिसके फलस्वरूप आज के शिक्षक बच्चे के लिये आदर्श नहीं है जिसका अनुकरण कर वह स्वयं को संस्कारयुक्त बना सके । बच्चों में व्यक्तिगत गुणों का विकास अवरुद्ध हुआ है । उनमें आज्ञापालन, अनुशासन,
3. सच्चाई, ईमानदारी, सहयोग, सहायता का भाव जागृत नहीं हो रहा है अपितु प्रारम्भ से ही भौतिक सुखों की चाह पनपने लगती है जो होड़ के कारण उनमें ईर्या द्वेष और प्रतिष्पर्धा की भावना पैदाकर कर रही है माता पिता–गुरू एवं अन्य बड़ों के प्रति सम्मान, साथियों से प्रेम तथा सद्भाव में कमी आई है ।
4. श्रम के प्रति निष्ठा के स्थान पर तिकड़म से सफलता अर्जित करने की प्रवृत्ति बढ़ी है।
5. संयुक्त परिवार की अवधारणा समाप्त होती जा रही है तथा परिवार टूट रहे हैं ।उसमे
6. अकेलेपन ने व्यक्ति में अविश्वास की भावना उत्पन्न की है जिसके कारण उसमें असुरक्षा का भाव बढ़ा है और उसे सुरक्षा की चिन्ता रहने लगी है।
7. लोभ और स्वार्थ की प्रवृत्ति ने आदमी को आदमी से दूर कर दिया है । इस प्रका रिश्ते विखार रहे हैं।
8. धन संग्रह की प्रवृत्ति ने गला काट प्रतियोगिता को जन्म दिया है इसने शोषण की प्रवृत्ति को जन्म दिया है।
9. असुरक्षा की भावना के कारण इन्सान सुरक्षा की तलाश में अपराधियों की शरण में जारे लगा है

10. राजनीति में अपराधीकरण और भ्रष्टाचार पनपा है।
11. धरती हथियारों की मंडी हो गई है।
12. शोषण की प्रवृत्ति ने जल, जंगल, जमीन. वायु, पर्वत जैसे प्राकृतिक साधनों के दोहन को भी नहीं बक्शा है तथा अनियंत्रित तरीके से इनका दोहन हो रहा है।
13. पर्यावरण असंतुलन ने अनेक बीमारियां, विषमताएँ तथा विपत्तियां उत्पन्न कर दी है। जिनके फलस्वरूप लाइलाज रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

उपरोक्त दुष्प्रभाव यह स्पष्ट करते हैं कि जीवन मूल्यों के हास में उपभोक्तावाद सबसे प्रमुख कारण है । विज्ञान पदार्थ का रूपान्तरण तो कर सकता है व्यक्ति का रूपान्तरण नहीं जबकि आज आवश्यकता व्यक्ति के रूपान्तरण की है जो उत्तम शिक्षा से ही संभव है। उत्तम शिक्षा से तात्पर्य ऐसी शिक्षा से है जो आदर्श मानव का निर्माण कर सके । यदि बच्चे को प्रारम्भ से ही सदविचारों की शिक्षा मिल जावे तो आगे चलकर ये सद्विचार ही सद्व्यवहार एवं सद्कम्मों का निर्माण करेंगे जो उसको स्वयं के सार्थक जीवन जीने में तो सहायक होगे ही साथ में स्वयं को भी एक आदर्श नागरिक बनाने में सहायक सिद्ध होगें ।

हम जिन्दगी को और भी जिंदा बनायेंगे।
हम सभी से प्यार का रिश्ता निभायेंगे।
ये महल और मीनार हैं किस काम के ।
सबसे पहिले आदमी का घर बनायेंगे ।।

उद्देश्य

1. शिक्षा के गिरते स्तर को रोकना।
2. शाश्वत मूल्यों को बढ़ावा देना।
3. जीवन मूल्यों द्वारा टूटे रिश्तो को बचाना।
4. बढ़ते उपभोक्तावाद को रोकना।

निष्कर्ष

भारतीय परिस्थितियों में शिक्षा का डिजीटलीकरण करने को ही उसकी श्रेष्ठता का मापदण्ड नहीं बनाया जा सकता। पिछले कई वर्षों से बड़ी संख्या में खोले जाने वाले विद्यालय एवं महाविद्यालयों में विद्यार्थियों की नामांकन संख्या बढ़ी है किन्तु उनमें मूलभूत सुविधाओं की पूर्ति तथा शिक्षकों की नियुक्ति के लिये पर्याप्त निवेश की आवश्यकता है। निवेश के लिये निजी कम्पनियों से आर्थिक सहायता ली जा सकती है किन्तु संसाधन उपलब्ध करवाना, शिक्षकों की नियुक्ति में पारदर्शिता, प्रवेश प्रक्रिया में पारदर्शिता, विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में निरीक्षण व उनमें परिणामों की समीक्षा आदि की जवाबदेही सरकार द्वारा ही सुनिश्चित की जाये अन्यथा शिक्षा व्यवस्था पूर्ण रूप से निजी क्षेत्रों को सौंपने से शिक्षा का व्यापारीकरण होगा तथा सामान्य जन शिक्षा प्राप्त करने के मूल अधिकार से वंचित रह जायेगा। यदि भारतीय शिक्षा व्यवस्था में आधुनिक तकनीक के साथ भारतीयता की आत्मा और संस्कृति के अनुरूप शिक्षण की अनुकूल परिस्थितियों की स्थापना और विकास किया जायेगा तभी सन् 2027 में जब भारत विश्व का सबसे अधिक युवा आबादी वाला प्रथम देश होगा तब देश की अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने में युवा शक्ति का शत–प्रतिशत योगदान प्राप्त हो सकेगा युवा शक्ति भारत अपनी ज्ञान आधारित मूल शिक्षा के आधार पर विश्व मानवता को नई दिशा देने में सक्षम होगा।

"युग–युग के संचित संस्कार ऋषि मुनि के उच्च विचार "

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *धर्मवीर भारती (१९९६) : मानव,मूल्य और साहित्य*
2. *डॉ0 डी.एल शर्मा, (2005) : शिक्षा तथा भारतीय समाज,नवम संस्करण, सूर्या पब्लिकेशन*
3. *शंकर विजयवर्गीय (2005) : भारतीय शिक्षा का इतिहास, राजपाल एंड संस*
4. *आर ए, शर्मा (2008)मानव मूल्य एवं शिक्षा,आर लाल बुक डिपो मेरठ*
5. *वीरेंद्र प्रकाश शर्मा (2017) : भारतीय समाज , पंचशील प्रकाशन जयपुर*
6. *www.shaikshikmanthan.com*